The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 4 | Issue 4 | April 2026
ISSN: 2583-973X (Online), SJIF IF: 5.6
Website: www.theacademic.in

हीर-राँझा की हरियाणवी रागणी परंपरा: पिंगल शास्त्र के आलोक में एक सांस्कृतिक विश्लेषण (रागणी 17-22 के संदर्भ में)

आनन्द कुमार आशोधिया

स्वतंत्र शोधकर्ता एवं पूर्व वारंट ऑफिसर, भारतीय वायु सेना, **पता:** शाहपुर तुर्क, जिला सोनीपत, हरियाणा – 131001, **ईमेल:** ashodhiya68@gmail.com

DOI : https://doi.org/10.5281/zenodo.20127288

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Accepted: 25-04-2026

Published: 10-05-2026

Keywords:

रागणी, सांस्कृतिक विश्लेषण, हरियाणवी रागनी, हीर-राँझा, लोकसाहित्य, पिंगल शास्त्र, छंद-विधान, नारी-चेतना, सांस्कृतिक अध्ययन, लोक-परंपरा

ABSTRACT

यह शोधपत्र हरियाणवी लोकसाहित्य की प्रमुख विधा रागनी के अंतर्गत हीर-राँझा कथा की रागनी क्रमांक 17 से 22 तक का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन का उद्देश्य इन रागनियों में निहित प्रेम, विरह, वैराग्य, सामाजिक संघर्ष, नारी-चेतना तथा लोक-आध्यात्मिकता के विविध आयामों को समझना है। वृतांत, मूल रागनी-पाठ और पिंगल शास्त्रीय समीक्षा के आधार पर यह स्पष्ट किया गया है कि ये रचनाएँ केवल प्रेम-कथा तक सीमित नहीं हैं, बल्कि सामाजिक प्रतिरोध, सांस्कृतिक प्रतीकवाद और न्याय-बोध की भी सशक्त अभिव्यक्ति हैं। शोध में पिंगल शास्त्र के प्रमुख तत्त्वों—मात्रिक छंद, यति, गति और तुकबंदी—का उपयोग करते हुए यह सिद्ध किया गया है कि इन रागनियों में लोकधर्मी अभिव्यक्ति और शास्त्रीय अनुशासन का संतुलित समन्वय विद्यमान है। साथ ही, छंद-विधान, तर्ज, मंचीय संभावनाओं और भाषिक संरचना का विश्लेषण यह दर्शाता है कि ये रागनियाँ लोकनाट्य, सांस्कृतिक अध्ययन और अकादमिक विमर्श तीनों के लिए समान रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। इस प्रकार, प्रस्तुत अध्ययन हीर-राँझा की हरियाणवी रागनी परंपरा को व्यापक साहित्यिक और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में स्थापित करने का प्रयास करता है।

अध्ययन की पृष्ठभूमि एवं संदर्भ

प्रस्तुत अध्ययन हीर-राँझा विषयक हरियाणवी रागणी-परंपरा के उस क्रम का विश्लेषण करता है, जिसकी पूर्ववर्ती कड़ियों (रागणी 1-16) का परीक्षण पूर्व प्रकाशित शोधपत्रों में किया जा चुका है। हीर-राँझा कथा भारतीय उपमहाद्वीप की व्यापक रूप से प्रचलित प्रेमगाथाओं में से एक है, जिसका मूल स्रोत पंजाबी सूफी काव्य-परंपरा में निहित है। समय के साथ यह कथा विभिन्न भाषायी और सांस्कृतिक परिवेशों में पुनर्परिभाषित होती रही है। हरियाणवी रागणी-परंपरा में इसका रूपांतरण विशेष रूप से उल्लेखनीय है, क्योंकि यहाँ कथा स्थानीय बोली, लोक-मानस, सामाजिक संरचनाओं और सांस्कृतिक प्रतीकों के साथ एक नवीन अभिव्यक्ति ग्रहण करती है।

रागणी एक ऐसी लोकाभिव्यक्ति है जिसमें काव्य, संगीत, अभिनय और संवाद का समन्वित रूप विद्यमान रहता है। इसी कारण यह केवल साहित्यिक विधा नहीं, बल्कि लोक-संस्कृति का जीवंत माध्यम भी मानी जाती है। हीर-राँझा कथा के रागणी क्रमांक 17 से 22 तक के प्रसंग कथानक के महत्वपूर्ण संक्रमण-बिंदुओं को उद्घाटित करते हैं। इन रागनियों में राँझे के जोगी रूप, हीर की अंतर्द्वंद्व पूर्ण स्थिति, सहती की सक्रियता, सामाजिक अवरोधों, न्यायिक हस्तक्षेप तथा वैवाहिक स्वीकृति से संबंधित प्रसंग क्रमिक रूप से विकसित होते हैं।

इन रागनियों का महत्व इस तथ्य में निहित है कि यहाँ प्रेम केवल व्यक्तिगत भावानुभूति के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक नियंत्रण, नारी-अस्मिता, लोक-आस्था और न्याय-बोध के साथ अंतर्संबंधित रूप में उपस्थित होता है। इस प्रकार, रागणी 17 से 22 तक का अध्ययन साहित्यिक, सांस्कृतिक और समाजशास्त्रीय दृष्टियों से समान रूप से महत्त्वपूर्ण माना जा सकता है।

साहित्य समीक्षा

हीर-राँझा कथा पर उपलब्ध साहित्य का अधिकांश भाग इसके पंजाबी स्वरूप, विशेषतः वारिस शाह की कृति *हीर* पर केंद्रित रहा है, जहाँ इसे सूफी दर्शन, आध्यात्मिक प्रेम और आत्मिक एकत्व के प्रतीक के रूप में व्याख्यायित किया गया है। अन्नेमारी शिमेल ने अपनी कृति *Mystical Dimensions of Islam* में सूफी काव्य की प्रेम-दृष्टि को आत्मा और परमात्मा के मिलन से संबद्ध माना है, जिसका प्रभाव हीर-राँझा कथा की व्याख्याओं में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। इसी प्रकार आई. एच. कुरैशी ने पंजाबी प्रेमाख्यानों को सांस्कृतिक और आध्यात्मिक प्रतीकवाद से संबद्ध करते हुए उनके व्यापक सामाजिक महत्व को रेखांकित किया है।

इसके विपरीत, हरियाणवी रागनी-परंपरा में हीर-राँझा कथा के रूपांतरण पर अपेक्षाकृत सीमित शोध उपलब्ध है, जबकि यह रूप लोकजीवन, सामाजिक यथार्थ और क्षेत्रीय सांस्कृतिक संरचनाओं के अधिक

निकट दिखाई देता है। महेन्द्र भाणावत के अनुसार, हरियाणवी लोकसाहित्य में रागनी केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक संरचनाओं, लोक-न्याय और जन-भावनाओं की अभिव्यक्ति का सशक्त लोक माध्यम है। इसी प्रकार रघुवीर सिंह माठाना ने रागनी को हरियाणा की सांस्कृतिक अस्मिता का प्रमुख वाहक माना है, जिसमें कथा, संगीत और अभिनय का समन्वित रूप विद्यमान रहता है।

छंद-विधान के संदर्भ में हजारी प्रसाद द्विवेदी ने पिंगल शास्त्र को भारतीय काव्य-परंपरा की आधारभूत संरचना माना है, जिसमें मात्रिक संतुलन, यति, तुकांत और अनुप्रास के माध्यम से काव्य की लयात्मकता और कलात्मकता निर्मित होती है। इसी संदर्भ में नामवर सिंह का मत है कि लोककाव्य में छंद केवल संरचनात्मक उपकरण नहीं, बल्कि भावाभिव्यक्ति का सक्रिय माध्यम भी होता है। हरियाणवी रागनियों में यह छंद-विधान श्रवणीयता, मंचीय प्रभाव और स्मरणीयता को सुदृढ़ करता है।

नारी-चेतना के संदर्भ में भी लोककथाओं की आधुनिक व्याख्याओं में महत्वपूर्ण परिवर्तन दिखाई देता है। निर्मला जैन के अनुसार, समकालीन साहित्यिक दृष्टियों में स्त्री पात्र केवल करुणा या संवेदना की प्रतीक न होकर सक्रिय निर्णयकर्ता के रूप में उभरती हैं। प्रस्तुत रागनियों में सहती का चरित्र इसी परिवर्तनशील स्त्री-बोध का प्रतिनिधि रूप माना जा सकता है, क्योंकि वह कथा की दिशा को निर्णायक रूप से प्रभावित करती है। इसी संदर्भ में गणेश देवी ने लोकसाहित्य को जन-ज्ञान की प्रणाली के रूप में परिभाषित करते हुए उसमें निहित सामाजिक परिवर्तन और सांस्कृतिक चेतना की भूमिका को महत्त्वपूर्ण माना है।

उपलब्ध साहित्य के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि अधिकांश अध्ययन या तो कथा-वस्तु की व्याख्या तक सीमित हैं अथवा लोक-संगीत और मंचीय प्रस्तुति के आयामों पर केंद्रित हैं। वृतांत, मूल रागनी-पाठ और पिंगल-आधारित छंद-विश्लेषण को समन्वित रूप में प्रस्तुत करने वाले अध्ययन अपेक्षाकृत दुर्लभ हैं। इस दृष्टि से प्रस्तुत शोध वृतांत, काव्य-पाठ और छंद-विधान के त्रिस्तरीय विश्लेषण को एकीकृत रूप में प्रस्तुत करते हुए एक विशिष्ट अकादमिक परिप्रेक्ष्य निर्मित करने का प्रयास करता है।

शोध पद्धति

प्रस्तुत शोध गुणात्मक तथा व्याख्यात्मक अनुसंधान-पद्धति पर आधारित है। अध्ययन के लिए हीर-राँझा विषयक रागनी क्रमांक 17 से 22 तक के मूल पाठ, उनसे संबंधित वृतांत तथा उपलब्ध संदर्भ-सामग्री को प्राथमिक स्रोत के रूप में ग्रहण किया गया है। अनुसंधान की संरचना को अधिक व्यवस्थित और विश्लेषणात्मक बनाने के उद्देश्य से त्रिस्तरीय अध्ययन-ढाँचा अपनाया गया है।

प्रथम स्तर पर कथात्मक एवं साहित्यिक विश्लेषण किया गया है, जिसके अंतर्गत कथावस्तु, भाव-संरचना, प्रतीक-विधान, चरित्र-निर्माण तथा प्रसंगों की क्रमिकता का परीक्षण किया गया है। इस स्तर पर विशेष रूप से यह समझने का प्रयास किया गया है कि रागनियों में प्रेम, विरह, सामाजिक संघर्ष, नारी-अस्मिता और लोक-आध्यात्मिकता जैसे तत्व किस प्रकार अभिव्यक्त होते हैं।

द्वितीय स्तर पर पिंगल शास्त्र के आलोक में छंद-विधान का परीक्षण किया गया है। इसमें मात्रा-विन्यास, यति, गति, तुकांत, अनुप्रास तथा लयात्मक संरचना का विश्लेषण सम्मिलित है। इस प्रक्रिया के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि रागनियों की कलात्मक प्रभावशीलता केवल उनके कथ्य में नहीं, बल्कि उनके छंदात्मक अनुशासन और श्रवणीय संरचना में भी निहित है।

तृतीय स्तर पर सांस्कृतिक तथा मंचीय दृष्टि से रागनियों का परीक्षण किया गया है। इसके अंतर्गत तर्ज़, प्रस्तुति-शैली, वाद्य-संगति, संवादात्मकता और लोकनाट्यात्मक तत्वों का अध्ययन किया गया है। इस प्रकार, प्रस्तुत शोध रागनियों को केवल साहित्यिक पाठ के रूप में नहीं, बल्कि एक जीवंत लोकाभिव्यक्ति और सांस्कृतिक प्रदर्शन-विधा के रूप में स्थापित करने का प्रयास करता है।

कथात्मक एवं साहित्यिक विश्लेषण रागनी

रागनी 17 में राँझे का जोगी-वेश धारण कर रंगपुर की गलियों में "अलख निरंजन" का उद्घोष करते हुए हीर की खोज करना केवल कथानक की एक घटना नहीं, बल्कि प्रेम और वैराग्य के अंतर्द्वंद्व का प्रतीकात्मक रूप है। "कश्कोल हाथ में ठाकै राँझा मालिक के गुण गावण लाग्या" जैसी पंक्तियाँ यह संकेत करती हैं कि राँझे का बाह्य संन्यास वस्तुतः उसके आंतरिक अनुराग को छिपाने का माध्यम है। जब "हर घर तै भिक्षा मिल ज्यावै पर ना देवै हीर दिखाई" जैसी स्थिति निर्मित होती है, तब यह स्पष्ट होता है कि उसकी खोज भौतिक आवश्यकताओं से नहीं, बल्कि आत्मिक पुनर्मिलन की आकांक्षा से संचालित है। हीर और राँझे की दृष्टि का "बिजळी सी टूट पड़ी" के रूप में चित्रित होना विरहजन्य भाव-संचय के तीव्र विस्फोट का सूचक है। इस प्रकार, रागनी 17 प्रेम, विरह और वैराग्य के त्रिस्तरीय भाव-संबंध को उद्घाटित करती है।

रागनी 18 में कथानक का केंद्र स्त्री-अनुभूति और नारी-चेतना की ओर उन्मुख दिखाई देता है। सहती द्वारा हीर की शारीरिक और मानसिक अवस्था का चित्रण "हो उतरता ना ताप बाबा, झोड़ा हुआ शरीर का" जैसे कथनों के माध्यम से अत्यंत मार्मिक रूप में प्रस्तुत किया गया है। यहाँ प्रेम को केवल भावनात्मक अनुभूति के रूप में नहीं, बल्कि एक ऐसे अस्तित्वगत अनुभव के रूप में चित्रित किया गया है, जिसका प्रभाव शरीर और मन दोनों पर पड़ता है। "राँझा राँझा रटे जा सै" जैसी पंक्ति प्रेम की उस एकाग्रता को

व्यक्त करती है, जिसमें व्यक्ति का आत्मबोध प्रिय के स्मरण में विलीन हो जाता है। यह रागनी विरह को केवल व्यक्तिगत वेदना नहीं, बल्कि भावात्मक समर्पण की चरम स्थिति के रूप में प्रस्तुत करती है।

रागनी 19 में कथा का नाटकीय पक्ष अधिक मुखर होकर सामने आता है। "भाज ल्यो रे भाज ल्यो साँप लड़ग्या" जैसी उद्घोषात्मक शैली लोकनाट्य की जीवंतता और मंचीय प्रभावशीलता को रेखांकित करती है। साँप के डसने का बहाना वस्तुतः सामाजिक निगरानी और पारिवारिक नियंत्रण से बचने की एक रणनीतिक योजना के रूप में प्रयुक्त हुआ है। "काळे बाग़ का जोगी सिद्ध मँत्र जाणै सै" जैसी पंक्ति राँझे के जोगी रूप को लोकविश्वास और आध्यात्मिक वैधता प्रदान करती है। इस प्रकार, रागनी 19 में कथा-प्रसंग, लोक-आस्था और नाटकीयता का प्रभावी समन्वय दिखाई देता है।

रागनी 20 में प्रेम का स्वर विद्रोह और प्रतिरोध के रूप में विकसित होता है। "म्हारी हीर नै ले चम्पत होग्या वो काळे बाग़ का जोगी" जैसी पंक्तियाँ यह संकेत करती हैं कि प्रेमियों का मिलन सामाजिक संरचनाओं और पारिवारिक नियंत्रण के विरुद्ध एक प्रकार का प्रतिरोध है। इस रागनी में गति, तनाव और क्रियात्मकता विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। परिवार द्वारा पीछा किया जाना उस सामाजिक व्यवस्था का प्रतीक है, जो व्यक्ति की स्वतंत्र इच्छा और प्रेम की स्वायत्तता को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है। इस प्रकार, रागनी 20 प्रेम और सामाजिक नियंत्रण के मध्य संघर्ष को तीव्र रूप में प्रस्तुत करती है।

रागनी 21 में न्याय, लोक-आस्था और आध्यात्मिक शक्ति का समन्वित रूप दृष्टिगोचर होता है। "जिसनै चोर जार समझो थे, वो राँझा कोए लुँगाड़ा ना" जैसी पंक्ति सामाजिक भ्रांति और वास्तविक सत्य के बीच उपस्थित द्वंद्व को उद्घाटित करती है। काजी के अन्यायपूर्ण निर्णय के बाद राँझे की प्रार्थना तथा उसके परिणामस्वरूप उत्पन्न दैवी संकट लोक-मानस में फकीर और जोगी की आध्यात्मिक शक्ति के प्रति गहरी आस्था को अभिव्यक्त करता है। राजा का हस्तक्षेप "यो राजा शाही सै फरमान" के रूप में न्याय की पुनर्स्थापना और सामाजिक संतुलन का प्रतीक बनकर सामने आता है।

रागनी 22 कथा के भावात्मक और सांस्कृतिक समापन को प्रस्तुत करती है। "हो बनड़ा बणकै आइये राँझे, मैं बाट देखती पाऊँगी" जैसी पंक्तियाँ हीर की सक्रिय स्वीकृति और उसकी भावनात्मक दृढ़ता को व्यक्त करती हैं। यहाँ प्रेम व्यक्तिगत अनुभव की सीमा से आगे बढ़कर सामाजिक और सांस्कृतिक स्वीकृति प्राप्त करता है। विवाह से संबंधित लोकाचार—जैसे "सोळा सिंगार", "गाजा बाजा" और "सालियाँ के नखरे"—कथा को केवल पारिवारिक परिणति नहीं देते, बल्कि उसे सांस्कृतिक पूर्णता भी प्रदान करते हैं। इस प्रकार, रागनी 22 प्रेम, सामाजिक स्वीकृति और लोक-सांस्कृतिक परंपराओं के समन्वित रूप को अभिव्यक्त करती है।

पिंगल एवं छंदात्मक विश्लेषण

रागनी 17 से 22 तक के छंद-विधान में पिंगल शास्त्र के सिद्धांतों का सुव्यवस्थित और अभिव्यक्तिपरक प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। इन रचनाओं में सममात्रिक छंद का एक संतुलित विन्यास दिखाई देता है, जहाँ अधिकांश पंक्तियाँ लगभग समान मात्रा-संरचना का अनुसरण करती हैं। यह संरचनात्मक संतुलन रागनियों की श्रवणीयता, गेयता तथा मंचीय प्रभाव को सुदृढ़ करता है। अनेक पंक्तियों में मध्यवर्ती यति का प्रयोग भी स्पष्ट है, जिसके कारण कथ्य में ठहराव और प्रवाह का संतुलित समन्वय स्थापित होता है। यह यति-विन्यास विशेषतः करुण, वीर और उत्सवी प्रसंगों में भावानुकूल लय निर्मित करने में सहायक सिद्ध होता है।

रागनी 17 में "कश्कोल हाथ में ठाकै राँझा मालिक के गुण गावण लाग्या" तथा "घर घर अलख जगावण लाग्या" जैसी पंक्तियों में मात्रा-संतुलन और लयात्मक प्रवाह का सशक्त समन्वय दिखाई देता है। "लाग्या" ध्वनि की पुनरावृत्ति तुकांत को सुदृढ़ करने के साथ-साथ कथ्य में गतिशीलता का बोध कराती है। इसी प्रकार "अलख निरंजन अलख निरंजन" की आवृत्ति ध्वन्यात्मक प्रतिध्वनि उत्पन्न करती है, जिससे जोगी परंपरा और वैराग्य का वातावरण निर्मित होता है।

रागनी 18 में करुण रस की प्रधानता के कारण छंद अपेक्षाकृत मृदु और संवेदनात्मक रूप ग्रहण करता है। "हो उतरता ना ताप बाबा, झोड़ा हुआ शरीर का" तथा "गात सूख कै माड़ा होग्या" जैसी पंक्तियों में दीर्घ और ह्रस्व ध्वनियों का संयोजन शारीरिक दुर्बलता और मानसिक पीड़ा की अनुभूति को अधिक प्रभावशाली बनाता है। "शरीर का-पीर का" तथा "रहै-बड़ी रहै" जैसे तुकांत युग्म करुण भाव की निरंतरता को बनाए रखते हैं। "राँझा राँझा रटे जा सै" में नाम-आवृत्ति का प्रयोग भावात्मक एकाग्रता और स्मृति-प्रधानता को अभिव्यक्त करता है।

रागनी 19 में टेक-प्रधान संरचना विशेष रूप से उल्लेखनीय है। "भाज ल्यो रे भाज ल्यो साँप लड़ग्या" जैसी उद्घोषात्मक पंक्तियाँ मंचीय प्रस्तुति की दृष्टि से अत्यंत प्रभावी हैं। "भाज ल्यो" की पुनरावृत्ति लयात्मक तनाव और तात्कालिक का वातावरण निर्मित करती है। "लड़ग्या-चढ़ग्या" तथा "थमगी-भिंचगी" जैसे तुकांत युग्म दृश्यात्मकता और नाटकीयता को अधिक सघन बनाते हैं। "फूँक फूँक कै मँत्र मारै" जैसी अभिव्यक्तियों में ध्वनियों की पुनरावृत्ति मंत्रोच्चार की लय और लोक-आस्था के वातावरण को मूर्त रूप प्रदान करती है।

रागनी 20 में कथानक की क्रियात्मकता के कारण छंद में तीव्रता और गतिशीलता का विशेष समावेश दिखाई देता है। "ऊँट ऊँटणी घोड़े काढ़ो" तथा "चारों खूँट में अस्वार घुमादो" जैसी पंक्तियों में लघु

ध्वनियों की अधिकता से गति का तीव्र बोध उत्पन्न होता है। इससे भगदड़, पीछा और तनाव पूर्ण परिस्थितियों का वातावरण निर्मित होता है। "जोगी-सोगी-भोगी" तथा "पेश करो-लावैंगे-रहोगी" जैसे तुकांत समूह कथानक की विविधता और संघर्षपूर्ण स्थितियों को अधिक प्रभावी बनाते हैं।

रागनी 21 में छंद का प्रयोग गंभीर और उद्घोषात्मक शैली में हुआ है। "जिसनै चोर जार समझो थे, वो राँझा कोए लुँगाड़ा ना" जैसी पंक्ति में दीर्घ ध्वनियों की प्रधानता कथन को गंभीरता और अधिकार प्रदान करती है। "लुँगाड़ा ना-कनपाड़ा ना" जैसे तुकांत युग्म सत्य और असत्य के मध्य उपस्थित संघर्ष को ध्वन्यात्मक दृढ़ता प्रदान करते हैं। इस रागनी में अनुप्रास और पुनरुक्ति का प्रयोग अपेक्षाकृत संयमित है, जिससे न्यायिक और आध्यात्मिक वातावरण की गंभीरता बनी रहती है।

रागनी 22 में छंद पुनः कोमल, मधुर और उत्सवधर्मी रूप ग्रहण कर लेता है। "मैं तेरे संग ब्याह करके दुल्हन बन कर आउंगी" तथा "हो बनड़ा बणकै आइये राँझे" जैसी पंक्तियों में लयात्मक मधुरता और भावात्मक आशा का संतुलित समन्वय दिखाई देता है। "आऊँगी-पाऊँगी-हिलाऊँगी" जैसे तुकांत युग्म स्त्री-स्वर की कोमलता और भविष्य के प्रति आशावादी भाव को व्यक्त करते हैं। "गाजा बाजा" और "सोळा सिंगार" जैसे अनुप्रासयुक्त पद उत्सवधर्मिता, सांस्कृतिक उल्लास और विवाह-संस्कार की लोक-संवेदना को सशक्त रूप में अभिव्यक्त करते हैं।

समग्रतः रागनी 17 से 22 तक का छंद-विधान यह स्पष्ट करता है कि पिंगल शास्त्र के सिद्धांत—मात्रा-विन्यास, यति, तुकांत और अनुप्रास—इन रचनाओं में केवल तकनीकी अनुशासन के रूप में उपस्थित नहीं हैं, बल्कि वे भाव-अभिव्यक्ति के सक्रिय उपकरण के रूप में कार्य करते हैं। प्रत्येक रागनी में छंद कथ्य के अनुरूप अपना रूप बदलता है—वैराग्य में गंभीर, करुणा में मृदु, नाटकीय प्रसंगों में तीव्र तथा उत्सवधर्मी प्रसंगों में मधुर। इससे यह प्रमाणित होता है कि हरियाणवी रागनी-परंपरा में पिंगल शास्त्र केवल संरचनात्मक आधार नहीं, बल्कि जीवंत काव्य-चेतना का केंद्रीय तत्व है।

चर्चा

रागनी 17 से 22 तक का समग्र अध्ययन यह संकेत करता है कि यह श्रृंखला हीर-राँझा कथा के भावात्मक, सांस्कृतिक और संरचनात्मक उत्कर्ष का प्रतिनिधित्व करती है। इन रागनियों में प्रेम केवल निजी अनुभूति के रूप में उपस्थित नहीं है, बल्कि वह सामाजिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक संदर्भों से गहराई से संबद्ध दिखाई देता है।

रागनी 17 में राँझे का जोगी-वेश धारण करना केवल बाह्य रूपांतरण नहीं, बल्कि एक गहन सांकेतिक प्रक्रिया है। "अलख निरंजन" का उद्घोष उसे लोक-आध्यात्मिक परंपरा से जोड़ता है, जबकि हीर की निरंतर खोज यह स्पष्ट करती है कि उसका वैराग्य पूर्णतः त्यागमूलक न होकर प्रेम-प्रेरित है। इस प्रकार, राँझे का जोगी रूप प्रेम और वैराग्य के अंतर्संबंध का प्रतीक बन जाता है।

रागनी 18 में कथानक का केंद्र स्त्री-अनुभूति की ओर स्थानांतरित होता है। सहती द्वारा हीर की शारीरिक और मानसिक दशा का वर्णन प्रेम को एक गहन अस्तित्वगत अनुभव के रूप में प्रस्तुत करता है। यहाँ प्रेम केवल भावनात्मक लगाव नहीं, बल्कि ऐसी स्थिति है जो व्यक्ति की चेतना, स्मृति और शारीरिक स्थिति को प्रभावित करती है। हीर की पीड़ा के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि विरह लोककाव्य में केवल करुणा का स्रोत नहीं, बल्कि आत्मिक समर्पण का भी संकेतक है।

रागनी 19 और 20 में कथा अधिक नाटकीय और क्रियात्मक रूप ग्रहण करती है। साँप के डसने का प्रसंग सामाजिक निगरानी और पारिवारिक नियंत्रण से बचने की रणनीति के रूप में कार्य करता है। यह प्रसंग लोकविश्वास और सामाजिक यथार्थ के मध्य एक सेतु स्थापित करता है, जिसके माध्यम से प्रेमियों को पुनर्मिलन का अवसर प्राप्त होता है। इसके पश्चात पलायन का प्रसंग सामाजिक संरचना के विरुद्ध प्रतिरोध का रूप ग्रहण कर लेता है। यहाँ प्रेम व्यक्तिगत चयन और स्वतंत्र इच्छा का प्रतीक बनकर उभरता है, जबकि परिवार और समाज नियंत्रणकारी शक्ति के रूप में सामने आते हैं।

रागनी 21 में न्याय, धर्म और लोक-आस्था का अंतर्संबंध प्रमुख रूप से उभरता है। काजी का अन्यायपूर्ण निर्णय सामाजिक सत्ता की सीमाओं को उद्घाटित करता है, जबकि राँझे की प्रार्थना और उसके परिणामस्वरूप उत्पन्न दैवी संकट लोक-मानस में आध्यात्मिक शक्ति के महत्व को स्थापित करता है। राजा का हस्तक्षेप इस असंतुलन को दूर करते हुए न्याय की पुनर्स्थापना करता है। इस प्रकार, रागनी 21 यह स्पष्ट करती है कि लोक-चेतना में न्याय केवल विधिक प्रक्रिया नहीं, बल्कि नैतिक और आध्यात्मिक संतुलन से भी संबद्ध होता है।

रागनी 22 में कथा का समाधान सामाजिक स्वीकृति और सांस्कृतिक समावेशन के रूप में सामने आता है। हीर का विवाह के प्रति आग्रह यह संकेत करता है कि प्रेम को स्थायित्व और सामाजिक सम्मान तभी प्राप्त होता है, जब वह स्वीकृत सामाजिक संरचना के भीतर प्रतिष्ठित हो। विवाह-संबंधी लोकाचारों का समावेश इस रागनी को केवल व्यक्तिगत मिलन की कथा नहीं रहने देता, बल्कि उसे सामुदायिक और सांस्कृतिक उत्सव का रूप प्रदान करता है।

समग्रतः यह कहा जा सकता है कि रागनी 17 से 22 तक की श्रृंखला प्रेम, विरह, नारी-अनुभूति, लोक-आस्था, न्याय और सामाजिक स्वीकृति जैसे विविध आयामों का समन्वित प्रतिरूप प्रस्तुत करती है। ये रागनियाँ केवल एक लोकप्रिय प्रेमकथा का विस्तार नहीं हैं, बल्कि वे हरियाणवी लोक-संस्कृति की संवेदनात्मक और वैचारिक संरचना को भी अभिव्यक्त करती हैं।

निष्कर्ष

रागनी 17 से 22 के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि हरियाणवी रागनी-परंपरा में हीर-राँझा कथा केवल प्रेमकथा के रूप में सीमित नहीं रहती, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक अर्थों से युक्त बहुआयामी लोक-विमर्श का रूप ग्रहण करती है। इन रागनियों में प्रेम, विरह, वैराग्य, सामाजिक प्रतिरोध और न्याय-बोध परस्पर संबद्ध रूप में उपस्थित हैं, जिसके कारण ये रचनाएँ लोक-संस्कृति के महत्त्वपूर्ण दस्तावेज के रूप में प्रतिष्ठित होती हैं।

प्रस्तुत अध्ययन का प्रमुख योगदान यह है कि इसमें वृतांत, मूल रागनी-पाठ और पिंगल-आधारित छंद-विश्लेषण को एकीकृत रूप में प्रस्तुत किया गया है। इससे यह स्पष्ट हुआ कि मात्रा-विन्यास, यति, तुकांत और अनुप्रास जैसे छंदगत तत्व केवल तकनीकी संरचनाएँ नहीं हैं, बल्कि वे भावाभिव्यक्ति, श्रवणीयता और मंचीय प्रभाव के सक्रिय उपकरण के रूप में कार्य करते हैं।

अध्ययन यह भी संकेत करता है कि हीर और सहती जैसे स्त्री-पात्र कथा में निष्क्रिय उपस्थिति न होकर सक्रिय भूमिका निभाते हैं। साथ ही, न्याय, लोक-आस्था और दैवी हस्तक्षेप की अवधारणाएँ यह दर्शाती हैं कि लोकसाहित्य में न्याय केवल विधिक प्रक्रिया नहीं, बल्कि सांस्कृतिक विश्वास से भी संबद्ध होता है। इस प्रकार, यह शोध हरियाणवी रागनी-परंपरा को साहित्यिक, सांस्कृतिक और पिंगल-शास्त्रीय अध्ययन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण आधार प्रदान करता है।

संदर्भ सूची (APA शैली)

आशोधिया, ए. के. (2025). *हीर-राँझा रागणी संग्रह*. एस जैन पब्लिकेशन, अगस्त 2025.

आशोधिया, ए. के. (2026). *हीर-राँझा की हरियाणवी रागणी परंपरा: पिंगल शास्त्र के आलोक में एक सांस्कृतिक विश्लेषण (रागणी 1-7 के संदर्भ में)*. दि एकेडेमिक, खंड 4, अंक 3.

आशोधिया, ए. के. (2026). *हीर-राँझा की हरियाणवी रागणी परंपरा: पिंगल शास्त्र के आलोक में एक सांस्कृतिक विश्लेषण (रागणी 8-16 के संदर्भ में)*. शोधपत्र: इंटरनेशनल जर्नल ऑफ साइंस एंड ह्यूमैनिटीज (SPIJSH) https://www.shodhpatra.org/papers/volume-3/issue-4/spijsh45689/.

भाणावत, एम. (1993). *लोक साहित्य: सिद्धांत और प्रयोग*. राजस्थान साहित्य अकादमी.

देवी, जी. एन. (2001). *After amnesia: Tradition and change in Indian literary criticism*. Orient Longman.

दूहन, पी. (2018). *हरियाणवी लोक साहित्य और रागणी परंपरा*. हरियाणा साहित्य अकादमी.

द्विवेदी, एच. पी. (1952). *हिंदी साहित्य की भूमिका*. राजकमल प्रकाशन.

जैन, एन. (1992). *नारी चेतना और साहित्य*. वाणी प्रकाशन.

मलिक, आर. एस. (2015). *पिंगल शास्त्र और हिंदी छंद विद्या*. साहित्य प्रकाशन.

मठाना, आर. एस. (2005). *हरियाणवी लोक साहित्य का ऐतिहासिक विकास*. हरियाणा ग्रंथ अकादमी.

Qureshi, I. H. (1967). *The Muslim community of the Indo-Pakistan subcontinent (610-1947)*. Mouton.

Schimmel, A. (1975). *Mystical dimensions of Islam*. University of North Carolina Press.

Sharma, K. (2017). *Folk traditions and performance culture in North India*. Journal of Indian Folklore Studies, 12(2), 45-62.

सिंह, जी. (2012). *हीर-राँझा: एक सांस्कृतिक और साहित्यिक अध्ययन*. पंजाबी यूनिवर्सिटी प्रेस.

सिंह, एन. (1980). *कविता के नए प्रतिमान*. राजकमल प्रकाशन.